श्री क्षीरभवानो तीर्थस्थान

पर

एक विहंगम दृष्टि

संपादक :—
१. महेश्वरनाथ रैणा संतोषो
२. अमरनाथ साबनी

धर्मार्थ ट्रस्ट, जम्मू व काश्मीर द्वारा प्रकाशित

सन् १९८९ मूल्य : रु० ३/-

वेली प्रेस, श्रीनगर, काश्मीर फोन : ७४६४४

ॐ

श्री महाराज्ञी भगवत्यै नम

"श्री महाराज्ञी यन्त्रम्"

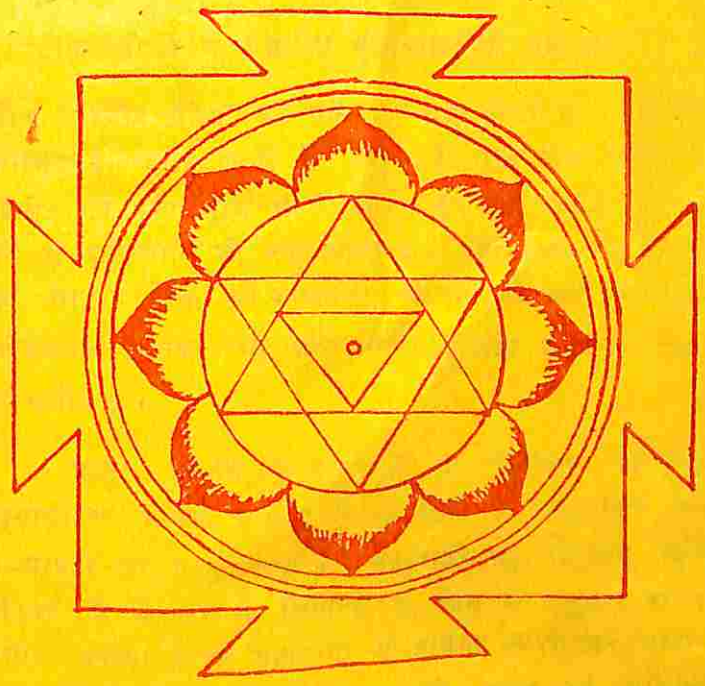

बिन्दुस्त्रयश्रं षडश्रं च वृत्ताष्टदल मण्डितम् ।
वृत्तत्रयं धरासद्म राज्ञी श्रीचक्रमीरितम् ॥

प्रसिद्ध इतिहासकार कल्हण अपनी राजतरंगिनी में काश्मीर की आध्यात्मिक महानता को अधोलिखित पंक्ति में वर्णन करते हैं :—

"तिलाँशोऽपि न यत्रास्ति पृथिव्यास्तीर्थैः बहिष्कृतः"

अर्थात् काश्मीर प्रदेश का एक २ अणु तीर्थों की पावनता से सुशोभित है, दूसरे शब्दों में विश्व के साढे तीन करोड तीर्थ काश्मीर की पुण्य भूमि में विद्यमान हैं। इस प्रदेश को प्राचीन काल से शक्तिधाम भी कहा जाता है। जहां विशेषकर अमरेश्वर गुफा, मार्तण्ड तीर्थ, श्री ज्वालाजी, श्री शारिका जो, श्री महाराज्ञी (क्षीरभवानी) तथा श्री शारदामाता इत्यादि अनुपम तीर्थस्थान उल्लेखनीय हैं।

प्रस्तुत प्रकरण में महाराज्ञी के तीर्थस्थान का विवरण सवसाधारण भावुक जनता को दो भिन्न २ ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर प्रस्तुत करते हैं। महाराज्ञी का माहात्म्य "भृंगीश संहिता" में विस्तार से लिपिबद्ध है, जिस के अनुसार रावण ने अघोर तपस्या करके महामाया से प्रार्थना करके वर मांगा कि "हे देवि! आप लंका के राज्य को समृद्ध एवं शक्तिशाली बनाने के लिए यहां लंका में निवास करें" देवी ने यह प्रार्थना स्वीकार कर लङ्काद्वीप के उत्तरीय दिशा के मध्यभाग में एक कुण्ड में जो अनन्त नागों से आवृत था वहां जगदम्बा श्यामा

तामसी रूप में प्रतिष्टित हुई। फिर इस घटना के पश्चात्, रावण राक्षसों सहित इनकी पूजा राक्षसी परम्परा के अनुसार करने लगे। परन्तु देवी राक्षसों के दुर्व्यवहार से क्रोधित तथा असन्तुष्ट हुई। फिर जब त्रेता युग में श्री रामचन्द्रजी ने लङ्का पर आक्रमण किया तो रावण का भावीनाश जानकर भगवती श्यामा ने महाबली हनुमान को आदेश दिया कि वह उनको अपने कन्धों पर बिठाकर सती देश (काश्मीर) ले चले। क्योंकि उन के वहां प्रतिष्ठित रहने पर लङ्का तथा रावण का नाश वर के अनुसार असंभव हो जाता। अतः हनुमान्जी ने माता की आज्ञा शिरोधार्य करके तुरन्त ३६० नागों सहित देवी श्यामा को कन्धों पर उठा कर काश्मीर की ओर प्रयाण किया, और समुद्र तथा भिन्न २ प्रदेशों, पर्वतों, नदियों आदि को लांघ कर दक्षिणीय पार्वतीय पाञ्चाल क्षेत्र से काश्मोर में प्रवेश किया। यहां उनका सर्वप्रथम पदार्पण विष्णुपाद तीर्थ पर हुआ, जहां रम्य वनस्थली की तलहटी मध्यग्राम (मंज गाम) में देवी ने उतर कर कुछ समय विश्राम किया। वहां से फिर देवसर गांव की उपत्यका (खन्न भरनी) तदनन्तर लुकटीपुर, (अनन्तनाग), राईथन, बादीपुर, कोटीतीर्थ, चण्डीपुर तथा शारदा तीर्थ, प्रायः काश्मीर के सब मुख्य स्थानों का परिभ्रमण करके अन्त में पवित्र शादीपुर के पास (काश्मीर के प्रयागराज तीर्थ के निकट) हिमालय पर्वत की श्रृङ्खला की तलहटी में अतिरमणीय वृक्षों से आच्छादित नर्म तथा दलदल वाली भूमि तूल मूल रुई जैसी नर्म स्थान को अपना चिरस्थाई वास बनाया। भृन्गीश संहिता के अनुसार भैरव भैरवी को इन शब्दों में इस स्थान का विवरण देते है :—

तूल वत् तुल्यतां यत्र स्थानान्यन्यानि सुन्दरि।
लघु भूतानि मूल्येन तस्मात्तु तूलमूल्यकम् ॥

इस प्रकार संतभक्तों के हितार्थ तामसी प्रकृति को त्याग कर भगवती श्यामा सात्विक रूप में सौम्य तथा अह्लादित स्वरूप में महाराज्ञी भगवती के स्वरूप में प्रतिष्ठित हुई तथा इस पवित्र कुण्ड में १५ मात्रिकाओं, बीजाक्षरों सहित सुशोभित हुई। महाराज्ञी का पंचदश बीजाक्षरों का महायन्त्र है। यहां पर उनकी पूजा तथा नैवेद्य सात्विक उपचारों दूध, मिष्टान्न, क्षीर, पुष्प, द्वारा आरम्भ हुई। इस कारण लौकिक प्रथा के अनुसार इनको "क्षीरभवानी" के शुभ नाम से भी पुकारा जाने लगा। तब से यहां मां के अनुग्रह से भक्तों को सांसारिक लाभ के साथ आध्यात्मिक लाभ भी प्राप्त हुआ है, जिन अनुग्रह पात्रों में विशेषकर स्वामी विवेकानन्दजी, शिवस्वरूप स्वा० विद्याधरजी, संस्कृत तथा शैवशास्त्र के अद्वितीय पण्डित हर भट्ट जी शास्त्री भू० पू० काश्मीर अनुसन्धान विभाग के अध्यक्ष तथा काश्मीरी भक्ति काव्य के सूर्य श्री कृष्णराजदान उल्लेखनीय हैं। जब यहां स्वामी विवेकानन्द जी आए तो उनके मन में शङ्का पैदा हुई कि इस तीर्थ में आर्य्य जाति से भिन्न नास्तिक तथा अश्रद्धालु लोग भी प्रवेश करते हैं तथा कभी यहां पर कोई धर्म विरुद्ध कार्य न करें जिस पर उन्हें यहां उनके शब्दों के अनुसार समाधि में मां से आदेश हुआ कि क्या तुम मेरी रक्षा करते हो अथवा मैं तुम्हारी रक्षा करती हूं। हां यदि यहां पर कोई नास्तिक प्रवेश करके मेरे मन्दिर का अपमान करे तो तुम्हें उससे क्या सम्बन्ध है? स्वामी जी लिखते हैं ऐसा होने पर मेरा अहंकार नष्ट होगया तथा तब से मां की सर्वव्यापकता का भाव जागृत

हुआ पुकार उठे केवल "मां ही मां कीसत्ता तथा स्वरूप समस्त विश्व में व्याप्त है"।

इसी प्रकार स्वामी विद्याधर जी को निर्विकल्प समाधि द्वारा सायुज्य मां के चरणों में प्राप्त हुआ था। पंडित हर भट्ट शास्त्री जी के शब्दों में उनको शैव शास्त्रविद्या का ज्ञान यहीं प्राप्त हुआ था। जैसे संत शिरोमणि जमनगरी (शुपियान) के स्वामी आनन्दजी के आदेश अनुसार वह क्षीरभवानी तीर्थ पर रात्रि जागरण तथा पूजा में मग्न थे तो माता ने एक साधु के रूप में उन्हें अर्धरात्रि में अंजलि से जलपान कराया। और फिर आंखों से ओझल हो गई, तो पंडित जी को प्रतिभा जागृत हुई और तभी से उन्होंने फिर महान शैव तथा तांत्रिक ग्रन्थों का महाराजा हरिसिंह जी के शासन काल में उनकी छत्रछाया में लुप्त ग्रन्थों की टीका टिपण्णी तथा संशोधन करके प्रकाशन किया, जिन में गंधर्वतन्त्र, देवी रहस्य, पन्चस्तवी की वृहत् टीका बहुत विख्यात हैं। इस प्रकार मां यहा आशुतोषसिद्धिदात्री विराजमान है, जो शरणागतों की मनोभिलाषा तत्क्षण पूर्ण करती है।

यह तीर्थस्थान प्राचीन काल से आध्यात्मिक दृष्टिकोण के अतिरिक्त साहित्य की दृष्टि से भी बहुत प्रसिद्ध था, यहां के निवासियों को बाछ भट्ट कहते थे। डा० लारन्स— एक पाश्चात्य लेखक अपनी पुस्तक बेले आफ काश्मीर में इनकी सैनिक शक्ति तथा शौर्य के सम्बन्ध में लिखते हैं कि यहां के ब्राह्मणों में इतनी शक्ति थी कि इन्हों ने राजा हयापद को हराया था, जो कि काश्मीर में सन ७८२ ईस्वी में राज्य करता था। इसी प्रकार यहां राजा आससकारा सन ९३१ से ९४८ ई० तक राज्य करता था, वह इनकी अदम्य वीरता से अभिज्ञ था

तथा इनके प्रसन्न रखने के लिए तथा सहानुभूति प्राप्त करने के लिए धन भेंट में देता था। यहां का पुस्तकालय बहुत प्रसिद्ध था, जहां पर हस्तलिखित अमूल्य ग्रन्थ मौजूद थे तथा लोग दूर २ से यहां के पंडितों से शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते थे, इसके अतिरिक्त कलापूर्ण निर्मित देवताओं की मूर्तियों से सुसज्जित भव्य मन्दिर भी थे, जो राजनैतिक उथलपुथल तथा पठानों के शासन में नष्ट किए गए। इसकी महत्ता का वर्णन राजतरंगिनी में भी वर्णित है। तथा यह तीर्थस्थान बहुत समय तक लुप्त रहा।

इस तीर्थ के पुनः प्रादुर्भाव होने के सम्बन्ध में दिवङ्गत शैवाचार्य श्री शिवोपाध्याय जो (श्री अभिनवगुप्त के वंशज है) ने पठान शासन काल में एक ग्रन्थ की रचना की है तथा उस ग्रन्थ के आधार पर महाराज्ञी तीर्थ के पुनः प्रतिष्ठत होने की घटना इस प्रकार है :—

मुसलमान शासन काल में गांधरबल के बहुत से आस पास के क्षेत्र नीचे धन्स कर जलमग्न होगए, तथा वर्तमान तुलामुला का गांव भी डूब गया तथा अदृश्य हो गया। अन्ततः कालान्तर में मुगलों के शासन काल के अन्तिम चरण में श्रीनगर के एक परम देवी उपासक तथा विद्वान पंडित कृष्णदास टपिलू जो बहोरीकदल में रहते थे, उनकी अनन्य भक्ति तथा उपासना से प्रसन्न होकर भगवती ने उन्हें स्वप्न में दर्शन देकर आदेश दिया कि वह गांधरबल में नौका में सवार होकर उनके जल मग्न तीर्थस्थान की खोज करे तथा उनकी नौका का पथ प्रदर्शन एक तैरता हुआ नाग करेगा, और नौका के तैरते २ वह नाग जहां अपना फन ऊपर उठा कर खडा होजाएगा, वहीं महाराज्ञी

का पावन तीर्थ है, तथा वहीं पर उनको पूजा की जाए, तो फलस्वरूप भक्तों के वाञ्छित मनोरथ सिद्ध होजांएगे। पंडितजी ने दूसरे दिन यह स्वप्न की सारी घटना अपने दूसरे साथियों को सुनाई। भक्तसहचर यह वार्ता सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। तथा उन्हों ने तीर्थस्थान की खोज करने के लिए अपनी सेवाएं पण्डितजी को समर्पित कीं। तत्पश्चात् यह सब देवी भक्त नौकाओं में गांधरबल की ओर चल पडे। इनकी अगवानी पण्डित टपिलू कर रहे थे। गांधरबल पहुंचने पर जल के ऊपर तैरते हुए एक नाग के दर्शन हुए तथा यथादेश यह भक्तमण्डली नौकाओं में इस नागराज का अनुसरण करने लगे, आगे बढते २ अंत में नागराज तुलामुला ग्राम के बीच में एक विशेष स्थान पर पहुंचे तथा वहां पर एकदम अपना फन ऊपर उठाकर नागराज खडा होगया, तथा श्री कृष्ण जू टपिलू ने उस स्थान पर जलमग्न दलदल भूमि में एक लम्बा लकडी का डण्डा गाड दिया। तदनन्तर नागराज ने यहां जल के ऊपर एक षट्कोण आकार की परिक्रमा की, जहां २ से नागराज चक्कर काटता गया वहां २ पर लम्बे डण्डों को गाड कर वर्तमान कुण्ड की सीमा निधारित की गई। फिर नागराज पुनः उसी स्थान पर पहुंच कर खडा होगया जहां सर्व प्रथम खडा हुआ था। इस प्रकार नागराज वहां पर जल में अदृश्य होगया। दूसरे दिन से भक्त नौकाओं में मिट्टी तथा कंकर डण्डों से घिरे स्थान की सीमा पर डालते गये। ऐसे मिट्टी तथा कंकर डालने से कुण्ड के तटों पर एक छोटा द्वीप जैसा बनगया जिसके मध्य में छः पार्श्वों वाला वर्तमान महाराज्ञो का अमृत कुण्ड निधारित हुआ फिर ज्येष्ठशुक्लाष्टमी के पावन दिवस पर श्री कृष्ण जू टपिलू की अध्यक्षता में महाराज्ञी के सब भक्तों ने विधिपूर्वक शास्त्रानुसार देवी की प्रतिष्ठा तथा पूजा इस अमृत कुण्ड में सम्पन्न की और तब से विशेषकर इस

तिथि पर प्रति वर्ष एक धार्मिक महोत्सव मनाया जा रहा है। वैसे ज्येष्ट शुक्लाष्ठमी के दिन भगवान भास्कर सौर मण्डल में अपनी पराकाष्ठा पर होते हैं। अतः इस कारण भी इस शुभ दिवस का महत्व है। ज्योंही जलरूपणी भगवती की पूजा भक्तों द्वारा समाप्त हुई त्योंहो कुण्ड में एक भोज पत्र तैरता हुआ भक्तों को दृष्ठिगोचर हुआ तथा इस भोज पत्र को पंडित जी ने उठाया और उस पर निम्न लिखित श्लोक अंकित था :—

या द्वादशार्कपरिमण्डित मूर्तिरेका
सिंहासन स्थितिमतीमुरगैः वृताञ्च।
देवीमनक्षगतिमीश्वरतां प्रपन्नां
तां नौमि भर्गवपुषीं परमार्थराज्ञीम् ॥

I Prostrate to Supreme Goddess Maha Ragnya who is lustrous having around twelve suns and seated on Lion throne, wrapped by the Serpents, not visible to the material eyes but is realized by spiritualist.

इस देवी के अनुग्रह रूपी प्रसाद के प्राप्त करने पर पण्डित कृष्ण जू टपिलू की प्रसन्नता की सीमा न रही, तो भावविभोर होकर उन्हों ने इस ऊपर कथित श्लोक के एक २ अक्षर स एक २ श्लोक को रचना की, जो इस समय महाराज्ञो स्तोत्र से प्रसिद्ध है। इस महा देवी का मुख्यनाम महाराज्ञी है। यह तोर्थ श्रीनगर के उत्तर पश्चिम में २२ कि० मो० की दूरी पर स्थित है यह नाम विद्यार्णव तंत्र तथा देवी रहस्य आगम में भी वर्णित है। प्रायः लोग इसको "क्षीरभवानी" के नाम से पुकारते हैं। इस तीर्थ के पुनरुत्थान काल से यहां पर प्रति शुक्लाष्ठमी तथा विशेषकर ज्येष्ट शुक्लाष्ठमी और आषाढ शुक्लाष्टमो को भक्तगण द्वारा पूजा, पाठ, कीर्तन तथा रात्रिजागरण होता है।

इस कुण्ड की एक विशेषता यह भी है कि इसके जल का वर्ण (रंग) समय २ पर बदलता रहता है, विशेषकर जब देश में कभी किसी उपद्रव या विपत्ति की सम्भावना होती है तो अमृत कुण्ड के जल का वर्ण (रंग) काला पड जाता है।

दूसरी विशेषता यह है कि प्रायः इस कुण्ड के जल के ऊपर स्वयंभू यंत्र कभी २ बन जाते हैं जिनका दर्शन करके भक्त लोग सन्तुष्ट तथा कृतकृत्य हो जाते हैं। वैसे कुण्ड के बीच वाले स्थान को 'विंदु' कहते हैं तथा इसकी आकृति मूलाधार से मिलती है जिसका यौगिक क्रिया षट्चक्र भेदन में बडा महत्व है। संक्षेप में इस तीर्थराज की गरिमा हर प्रकार के शास्त्रीय दृष्टिकोण से मान्य है।

पुराने समय में भक्तलोग यहां की यात्रा पैदल करके अपने को धन्य समझते थे। इस में भी एक आध्यात्मिक रहस्य निहित है। पहले इस यात्रा में रास्ते में विचारनाग आता है अर्थात् भक्त के लिए आध्यात्मिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सत् असत् आत्म तथा अनात्म पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करना होता है जो केवल सद्विचार से प्राप्त होता है अतः पहले साधक को सद् विचारों के (नाग) चश्मे में गोता लगाना अनिवार्य है। फिर आगे मार्ग में दूसरा स्थान (त्युंगलबाल) अंगारों की उपत्यका, अर्थात् यह विषयमय असार संसार एक जलते हुए अंगारों की उपत्यका है तथा यहां ज्ञानाग्नि राजयोग की सहायता से भक्त को ज्ञानाग्नि से असत् के आवरण को दग्ध करना होता है इसी प्रकार आगे (अमरहेर) स्वर्ग सोपान है अर्थात् देह शुद्धि, मानस शुद्धि तथा अन्तःकरण शुद्धि प्राप्त करके

एक भक्त आध्यात्मिक यात्रा में अग्रसर होकर स्वर्ग सोपान पर चढ सकता है, इस प्रकार आगे मार्ग में (परन बोनि) अर्थात् पूर्णता आत्मसमर्पण करने का आदेश है और जब भक्त पूर्णतः सर्व प्रकार से मां के चरणों में आत्मसमर्पण करता है तो वह बिंदु में सायुज्य पदवी को जहां शिव तथा शक्ति हैं, प्राप्त करने का अधिकारी होकर निर्विकल्प समाधिस्थित होजाता है जो भक्त का परम लक्ष्य है।

वस्तुतः माता महाराज्ञी जी का पवित्र तीर्थ अपने श्रेष्ठ प्राकृतिक गुणों तथा आध्यात्मिक महानता के कारण सारे विश्व में एक अपूर्व स्थान है।

सौभाग्य से इस तीर्थ को उन्नति तथा विकास का कार्य एक दलदल द्वीप से भव्य तथा चिताकर्षक वर्तमान सुन्दर स्थान, हरी चिनारों से आच्छादित संगमरमर का मन्दिर जिसमें भूतेश्वर तथा महाराज्ञी की मूर्ति विराजित है, धार्मिक डोगरा शासकों द्वारा हुआ है। इस समय यहां का प्रबन्ध धर्मार्थ ट्रस्ट के अधीन है। जिस के सोलट्रस्टी डा० कर्णसिंह जी हैं। यहां शास्त्रानुसार विधिपूर्वक दैनिक पाठ पूजा तथा मासिक हवन का प्रबन्ध होता है। तथा एक बडी धर्मशाला तथा हवन शालाओं का निर्माण किया गया है जहां यात्री लोग सुविधा पूर्वक हवन इत्यादि करते हैं। इसके अतिरिक्त यहां पर यात्रियों को बर्तन तथा कम्बल आदि भी धर्मार्थ के स्थाई प्रबन्धक से प्राप्त होते हैं। इस तीर्थ के दर्शनार्थ प्रतिदिन विदेशी तथा भारत के दूर २ के प्रांतों से पर्यटक आया करते हैं, यहां बसों तथा कारों इत्यादि में आने जाने के लिए सुविधा प्राप्त हैं।

आभार प्रकट करना धर्म भी है और कर्तव्य भी—

जिन महानुभावों ने इस प्रकाशन में हमें योगदान, प्रेरणा तथा प्रोत्साहन दिया। आप है डा० बलजो नाथ जी पण्डिता तथा श्री गणेशदास जी शर्मा केन्द्रीय मुख्यमन्त्री तथा धर्मार्थ ट्रस्ट कौंसिल सदस्य। आशा है भविष्य में भी ट्रस्ट द्वारा प्रकाशनीय संकलनों के निमित्त उक्त योगदान प्राप्त होता रहेगा।

—संपादक

सत्यं शिवं सुन्दरम्